Knowledge Consortium of Gujarat
Department of Higher Education - Government of Gujarat
Journal of Social Science - ISSN : 2279-0241

Continuous Issue-25 | January – March 2017

बुनियादी शिक्षणः सम्पोषित विकास का सशक्त आधार
(गांधीजी के नई-तालीम विचार आधारित विश्लेषण)

प्रस्तुत लेख प्रसिद्ध गांधीविद स्व. श्री नारायणभाई देसाई को समर्पित है जिन्होंने बुनियादी शिक्षण के क्षेत्र में अतुलनीय कार्य किया है। वे मारु जीवन एज मारी वाणी के प्रखर लेखक होने के साथ-साथ गांधी कथाकार के रूप में जाने जाते रहे हैं। जिनका अल्प सानिध्य पाकर लेखक ने शिक्षा के वास्तविक स्वरूप को समझने का प्रयास किया। बेड़छी सम्पूर्ण क्रांति विद्यालय में 10 दिवसीय चिंतन शिविर में लेखक को नारायण दादा के साथ शिक्षा के सम्पोषित स्वरूप पर विमर्श का सघन सानिध्य प्राप्त हुआ। बुनियादी शिक्षण से जुड़े कुछ शब्द यथा व्यक्ति, समाज एवं समष्टि का ख्याल, जीवन शिक्षण, तंत्र व तत्व संबंधी विभेद, मानवीय सभ्यता, सुधार की शुरूआत प्रथम पुरुष एक वचन से, मानवीय संवेदना आदि उनके विमर्श का केन्द्र बिन्दु बनते थे। गांधीजी, विनोबाजी, जयप्रकाश नरायणजी के विचारों की झलक उनके व्याख्यानों में देखने को मिलती थी।

प्रस्तावनाः वर्तमान शिक्षण जगत की स्थिति-

आज के मशीनी युग में शिक्षा निर्जीव सी यंत्रवत बन चुकी है। शिक्षा के मायने सिमट चुके हैं मात्र अंग्रेजीशुदा होने या तकनीकी डिग्रियों की प्राप्ति तक। जिनका ध्येय ज्ञानार्जन या सीखना न होकर येनकेन प्रकारेण ऐसी नोकरियां हाँसिल करना है जिसमें काम न के बराबर हो, शारीरिक-श्रम न हो, ऊँचे वेतनमान हों। किसी को भी न तो शिक्षाजनित सामाजिक जबावदारी का भान है और न ही उसकी परवाह। बेरोजगार, हताश गैर अनुशासित व सामाजिक-मानवीय मुद्दों के प्रति नितांत असंवेदनशील शैक्षणिक उत्पाद वास्तविक शैक्षणिक उद्देश्यों के विपरीत प्रवाह का परिणाम कहा जा सकता है? इसके कार्य-कारणों की तह में जाने पर हम पाते हैं कि नौकरी की मृगमारीचिका में आज का युवा पगलाता जा रहा है। मानवीय सभ्यता के न तो वह नजदीक ही है और न ही उसे ऐसा करने की दरकार है। लगता है अक्षर ज्ञान की अंधी दौड़ व सूचनाओं का महत्तम भंडारण की होड़ में हम विवेक व संवेदनहीनता के साये में पढ़े तो सही पर गुने नहीं तथा शिक्षा के वास्तविक उद्देश्य से निरन्तर दूर हटते गए। शिक्षा जिसे सभ्यता एवं मानवीय मूल्यों के गठन का मानचेस्टर माना जाता रहा है तथा इस तरह के व्यक्तित्व निर्माण का प्रणेता माना जाता रहा है जिससे कि वह देश, समाज, मानवजाति और समूची सृष्टि के लिए एक आदर्श व उपयोगी परिसम्पत्ति सिद्ध हो सके एवं आने वाली पीढ़ी भी उनके जीवन से अर्थपूर्ण तादाम्य कायम करने में गर्व का अनुभव कर सके। अफसोस ! वर्तमान शिक्षण व्यवस्था का (जो डिग्री केन्द्रित बन चुकी है) तो समाज के सह-अस्तित्व व सामाजिक समरसतारूपी प्रतिमानों से दूर-दूर तक

नाता ही नहीं रहा। आज शिक्षा अपना निहितार्थ मर्म खोती जा रही है और उसमें मानवीय संवेदनाएं भी उपेक्षित हो चली हैं। शिक्षण के समुचित प्रयोगों के साथ आत्मसाक्षात्कार नहीं किया। महर्षि अरविन्द भी शिक्षा को आत्मबोध का प्रमुख साधन मानते हैं किन्तु आज की आधुनिक शिक्षा में ध्येय, साधन व साध्य के मध्य कोई तारतम्य ही नजर नहीं आता है। साधन व साध्य के बीच सीधा सम्बन्ध होता है। इसकी अवहेलना की दलील मे निरा धोखा ही है कि साधन और साध्य - जरिया और मुराद के बीच कोई संबन्ध नहीं है। साधन बीज है और साध्य हांसिल करने की चीज -पेड़ है अतः संबन्ध भी वही रहेगा। तब सवाल यह पैदा होता है कि हम तय करें कि शिक्षण रूपी तंत्र के द्वारा हम क्या पाना चाहते हैं? जबकि उससे पाया क्या जा सकता है और उसका प्रथमिक व द्वितीयक प्रदान क्या है? जरा ऐतिहासिक नीतिमत्ता के आइने में इस प्रश्न पर विचार करें तो हम पायेंगे कि शिक्षा के निहितार्थ को यह सूक्ति" विद्या ददाति विनयम् विनयातियात पात्रताम्" स्पष्ट करती है जिसका अर्थ है- विद्या से विनय व विनय से मानुष रूपी पात्रता मिलती है। यही इसका मूल प्रदान है जबकि जीविकोपार्जन की योग्यता या कुशलता तो उसका उप-उत्पाद ही माना जा सकता है वह भी तब, जब उसमें नीतिमत्ता की पैरवी होती हो। छन्दोग्य उपनिषद में भी स्पष्ट किया गया है **"यदैव विद्या करोति, श्रद्धा उपनिषद तदैव व्यवर्तमानम् भवति।"** अर्थात् वह ही केवल सामर्थ्य सम्पन्न, सर्वोत्कृष्ट व असरकारक बन सकता है जिसके पास-

विद्या	-	सैद्धान्तिक व व्यावहारिक ज्ञान
श्रद्धा	-	अपनी शक्तियों पर अटूट श्रद्धा या विश्वास
उपनिषद	-	कार्य के प्रति गहन चिन्तन तथा कार्य कारण के प्रति सजगता विद्यमान हो।

इसी सोच का समर्थन करते मानवतावादी शिक्षाशास्त्री एवं पूर्व राष्ट्रपति डॉ. जाकिर हुसेन के विचार महत्वपूर्ण प्रतीत होते है- "शिक्षा वही है जो हमे उस भविष्य की सहज दृष्टि प्रदान करती है जिसे बनाने का हम प्रयास कर रहे हैं और जो इसके निर्माण के लिए हमारे भीतर बौद्धिक शक्ति पैदा करती है।"

मानवीय पहलू को आत्मसात् करने वाला सही मायनों में जिसे चिन्तक मान सकते हैं, सोचने को विवश हैं कि वैयक्तिक, सामाजिक व राष्ट्रीय समस्याओं के मूल में कहीं यह शिक्षा अव्यवहारिक तो नहीं? वह इसके समाधान को सम्पोषित विकास की पैरवी करती गांधीविचार प्रेरित नई-तालीम बुनियादी शिक्षण-प्रशिक्षण व्यवस्था में अनुभव कर रहा है। तो क्यों न इसकी वर्तमान प्रासंगिकता व औचित्य को तराश लिया जाय।

नई-तालीम (बुनियादी शिक्षण) पर गांधीविचार.......

गांधीजी रस्किन के विचारों से काफी प्रभावित रहे हैं। नई तालीम या वास्तविक अर्थपूर्ण तालीम पर रस्किन के विचारों के संक्षेपण में हम पाते हैं कि शिक्षा का अर्थ यह नहीं है कि लोगों को यह बात सिखाई जाय जिसकी उन्हें जानकारी नहीं है। इसका अर्थ तो यह सिखाना है कि जीवन में किस तरह से बर्ताव करें जिसे वे अब तक नहीं कर पा रहे थे। शिक्षा का मतलब यह भी नहीं है कि युवाओं को अक्षर ज्ञान व संख्याओं का ज्ञान करा दिया जाय और वे बाद में गणित के ज्ञान का इस्तेमाल सिर्फ हेराफेरी में और साहित्यिक ज्ञान का इस्तेमाल

लोलुपता शांत करने में करें। अपितु उन्हें इस तरह से प्रशिक्षित किया जाय वे शरीर व आत्मा दोनों के सामंजस्य से काम करें तथा विनम्र भाव से देख-सुनकर काम कर सकें। शिक्षा व्यक्ति सभ्य बनाने का माध्यम है और सभ्यता वह आचरण है, जिससे आदमी अपना फर्ज अदा करता है। फर्ज अदा करने के मानी हैं नीति की पालना करना। नीति के पालन का मतलब है अपने मन और इन्द्रियों को वश में रखना। ऐसा करते हुए हम अपने को (अपनी असलियत को) पहचानते हैं। यही सभ्यता है। इससे जो उल्टा है वह बिगाड़ करने वाली है।

"सा विद्यायाविमुक्तये" उपनिषद का सूक्ति वाक्य जो गूजरात विद्यापीठ के प्रतीक चिन्ह के केन्द्र में स्थित है, शिक्षा के वास्तविक उद्देश्य की ओर ध्यान आकर्षित करता है। सही मायनो में शिक्षण वह है जो मुक्ति प्रदान करे- उन बंधनों से जिनसे समाज में भय, असमानता, नैराश्य, शोषण, आलस या अकर्मण्यता, रूढ़िवादिता अपने स्थापित ज्ञान तथा जीवन के व्यावहारिक नीतिमत्तापूर्ण प्रतिमानों के प्रति अविश्वास आदि पनपते हों, सामाजिक समरसता का ह्रास होता हो, जो हमें अपनों से दूर करती हो तथा उनके दुःख दर्द के प्रति असंवेदनशील अथवा मशीनी बना देती हो, सृष्टि या कुदरती संसाधनों के विदोहन व संरक्षण के प्रति विवेक-शून्य, गैर-जिम्मेदार व लापरवाह बनाती हो, श्रमसाध्यता की जगह अनैतिक साधनों की ओर प्रेरित करने का वातावरण सृजित करती हो जिससे वर्गवाद व अराजकता को बढ़वा मिलता हो। विद्या वही है जो मनुष्य को अज्ञानरूपी अंधकार, विकृति, पशुता व परतंत्रता की जंजीरों से मुक्ति दिलाए और उनके स्थापित सामाजिक-सांकृतिक प्रतिमानों को पोषित कर सके।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने वर्तमान शिक्षण व्यवस्था के रेतीले पाए- तीन "आर" रीडिंग, राइटिंग और रिमेम्बरिंग की लीक से अलग हटते हुए मानवीय मूल्य आधारित शिक्षा को तीन "एच" से जोड़कर देखा और इन घटकों को उन्होंने स्वराज्य से सुराज की ओर जाने हेतु अनिवार्य माना -

हैड (मस्तिष्क) - बुद्धि का विवेकपूर्ण विकास

हर्ट(ह्रदय) - ह्रदय में मानवीय संवेदनाओं को स्थान

हैण्ड(हाथ) - हाथ अर्थात् शारीरिक श्रम के प्रति लगाव उत्पन्न करने वाली

वे आरोग्य शिक्षण को भी आरग्य स्वराज्य का साधन मानते थे जिसमें जीवन शिक्षण के आयाम निहित हैं क्योंकि स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क का निवास होता है। निरोगी मानव शक्ति किसी भी देश की पूंजी कही जा सकती है।

गांधीजी का स्पष्ट मत रहा है कि सामाजिक शिक्षा या तालीम का सामान्य अर्थ अक्षर-ज्ञान नहीं है। अक्षर-ज्ञान तो मात्र एक साधन है उसका अच्छा उपयोग भी किया जा सकता है और बुरा उपयोग भी। एक किसान ईमानदारी से खेती करके अपनी रोटी कमाता है, उसे मामूली तौर पर दुनियावी ज्ञान है। अपने माँ, बाप के साथ कैसे बरतना और स्त्री तथा बच्चों के साथ कैसे पेश आना, जहाँ देहात में वह बसा हुआ है वहाँ उसकी

चाल ढाल कैसी होनी चाहिए इसका उसे काफी ज्ञान है, वह नीति के नियम समझता है और उनका पालन करता है लेकिन वह दस्तखत करना नहीं जानता, इस आदमी को आप अक्षर ज्ञान देकर क्या देना चाहते हैं, उसके सुख में कौनसी राहत बढ़ेगी? क्या उसकी झोपड़ी और उसके हालात के बारे में उसके मन में असंतोष पैदा करना चाहते हैं? ऐसा करना हो तो भी उसे अक्षरज्ञान देने की जरूरत नहीं है। पश्चिम के असर के नीचे हमने यह बात चलाई है कि लोगों को शिक्षा देनी चाहिए लेकिन उसके बारे में हम आगे पीछे की सोचते ही नहीं। जो लोग अंग्रेजी पढ़े हुए हैं उनकी संतानों को पहले नीति सीखनी चाहिए, उनकी मातृभाषा सिखानी चाहिए और हिन्दुस्तान की एक दूसरी भाषा सिखानी चाहिए। बालक जब पुख्ता उम्र के हों जांए तब ङले ही वे अंग्रेजी की शिक्षा पाये, और वह भी उसे मिटाने के इरादे से, न कि उसके जरिए पैसा कमाने के इरादे से। ऐसा करते समय भी हमें यह सीखना होगा कि अंग्रेजी में क्या सीखना चाहिए और क्या नहीं सीखना चाहिए। कौन से शास्त्र हमें पढ़ने चाहिए यह भी हमें सोचना होगा। जो अंग्रजी पुस्तकें काम की हैं उनका अपनी भाषाओं हमें अनुवाद करना होगा पश्चिमी सभ्यता को हमें बाहर निकालने ही की कोशिश करनी चाहिए।

मूल्य आधारित शिक्षा के सोपान-

"मेरे सपनों का भारत" व "ग्राम स्वराज" में गांधीजी ने जैसे सुदृढ़ राष्ट्र की परिकल्पना की थी उस दिशा में शिक्षा में मानवीय मूल्य रूपी आभूषणों की उपस्थिति अनिवार्य है इसकी स्पष्टता 1909 में लिखी उनकी बहु-चर्चित कृति "हिन्द स्वराज्य" में की गई है जिसमें प्रकट किए गए विचारों उन्होंने ता-उम्र की जरूरत महसूस नहीं की अपितु इस ओर उनकी दृड़ता और गहराती गई। एक अंग्रेजी विद्वान (हक्सली) ने शिक्षा के मकसद व स्वरूप के बारे में बहुत ही सटीक कहा है कि उस आदमी ने सच्ची शिक्षा पाई है, जिसके शरीर को ऐसी आदत डाली गई है कि वह उसके वश में रहता है, जिसका शरीर चैन से आसानी से सौंपे हुए काम करता है। उस आदमी ने सच्ची शिक्षा पाई है जिसकी बुद्धि शान्त, शुद्ध और न्यायदर्शी है। उसने सच्ची शिक्षा पाई है जिसका मन कुदरती कानूनो से भरा है और जिसकी इन्द्रियां उसके वश में हैं, जिसके मन की भावनाए बिल्कुल शुद्ध हैं, जिसे नीच कामों से नफरत है और जो दूसरों को अपने जैसा मानता है। ऐसा आदमी ही सच्चा तालीमशुदा शिक्षित माना जाएगा क्योंकि वह कुदरत के कानून के मुताबिक चलता है। कुदरत उसका अच्छा उपयोग करेगी जो उसका अच्छा उपयोग करेगा।

मूल्य आधारित शिक्षा के सवाल पर गांधीजी पूर्ण दृढ़ता साथ अपने विचारों की वकालत करते हुए कहते हैं कि इस अक्षरज्ञान का उपयोग मैं आप जैसे चंद पढेलिखे भाइयों के साथ ही कर सकता हूँ करोंड़ो प्रजा के लिए नहीं। मैं अक्षरज्ञान को हर हालत में बुरा नहीं कहता। मैं तो बस इतना ही कहता हूँ कि उस ज्ञान की हमें मूर्ति की तरह पूजा नहीं करनी चाहिए। वह हमारी कामधेनु नहीं है। वह अपनी जगह पर शोभा दे सकता है और वह जगह है जब आपने अपनी इन्द्रियों को वश में कर लिया हो, जब हमने अपनी नीति की नींव मजबूत करली हो, तब अगर हमें अक्षरज्ञान पाने की इच्छा हो तो उसे पाकर हम उसका अच्छा उपयोग कर सकते हैं। वह शिक्षा आभूषण के रूप में अच्छी लग सकती है। लेकिन अक्षरज्ञान का यदि आभूषण के तौर पर ही उपयोग हो

तो ऐसी शिक्षा को लाजिमी करने की जरूरत नहीं। हमारे पुराने स्कूल ही काफी हैं वहाँ नीति की शिक्षा को पहला स्थान दियाजाता है उस पर जो इमारत हम खड़ी करेंगे वह टिक सकेगी। नीति की शिक्षा द्वेष रहित व अनुशासित जीवन के लिए आवश्यक है। इसमें निम्न लिखित घटकों का समावेश अपरिहार्य है-

- शिक्षा वह है जो रूढिचुस्त रीतिरिवाज जो असमानता व अश्पृश्यता की पोषक हो, शोषण की वाहक हों तथा समाज को देश तथा समूची मानवता को अँधेरे के गर्त में धकेलती हों, से बाहर निकाल सके इनके प्रति इनमें अच्छे-बुरे की सोच का निर्णय करने तार्किक क्षमता का विकास करती हो यथा- स्पष्ट व खुली सोच, अपनी नैतिक भूमिका का अवबोधन, साहस, दृढ इच्छाशक्ति आदि।
- शिक्षा बहुजन हिताय बहुजन सुखाय, सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया तथा जिओ और जीने दो जैसी अहिसंक व परस्पर सहयोगी परोपकारी संस्कृति की वाहक हो, लोगों में सत्य की प्रभावना के साथ अन्याय के समक्ष सिर उठाने का साहस लाती हो, भय मुक्त समाज का निर्माण करने में स्तम्भ रूप हो, अंतिम छोर पर रहने वाले के प्रति ह्रदय में संवेदनाओं का स्थाई सृजन करती हो, तथा विलासता के जीवन को संयमित बनाते हुए चरित्र गठन की वकालत करती हो।
- शिक्षा का प्रदान किसी भी तरह परावलंबन के रूप में न हो, व्यक्ति श्रमसाध्यता के साथ आदर्श व निरोगी जीवन व्यतीत कर सके, अपनी अक्षुण सभ्यता को न भूले तथा सदैव नीति के पथ का आग्राही बना रहे।
- शिक्षा लोगों की छुपी क्षमताओं अथवा वक्त के प्रवाह में धूमिल पड़ चुकी क्षमताओं को उभारने का अवसर प्रदान करने वाली हो न कि जो उनके पास नहीं हैं, शायद व्यावहारिक रूप में वे उसकी जरूरत भी महसूस भी न करते हों उसके प्रति हीन भावना का अहसास कराने की।
- ईमानदारी, निष्ठा, उदारता, निष्पक्षता, समर्पण, प्रेम, परस्पर सहयोग, करूणा, कर्तव्यपरायणता, शिष्टाचारिता, संयम, संतोष, समता, समानता, सहिष्णुता एवं सत्यं शिवं सुन्दरम् जैसे शाश्वत मूल्यों की पोषक हो।

बुनियादी शिक्षण व्यवस्था के सोपान...एक नजर में

1. समूह जीवन का आचार-विचार एवं जीवनोपयोगी शिक्षण
2. चरित्र निर्माण एवं साधऩ शुद्धि पर विचार
3. श्रम-साध्याता एवं सृजनात्मकता
4. स्वयं के प्रति आत्मविश्वास व आत्म निर्भरता
5. सामाजिक एवं राष्ट्रीय सरोकार
6. सृष्टि का जतन तथा आसपास के वातावरण के प्रति जागृति व संवेदनशीलता
7. मानवीय मूल्यों का विकास एवं कर्तव्य बोध
8. सभ्य समाज का अभिनव अंग- शांति व समरसता का प्रतिनिधित्व

उपसंहार

शिक्षा का सम्पोषित विकास के साथ सीधा संबंध है। यदि समाज में शिक्षण व्यवस्था उपयुक्त है तो अहिंसक समाज रचना का निर्माण हो सकेगा जिसमें समानता, समता, समरसता, दया करूणा, ईमानदारी, कर्तव्यनिष्ठा जैसे मानवीय मूल्यों का समावेश हो। वास्तव में ये घटक ही सम्पोषित विकास की नींव कहे जाते है जिनका उद्‌गम शिक्षा के माध्यम किया जाना है। यदि शिक्षा अपने मूल उद्देश्यों से भटक जाती है अथवा मशीनवत होकर मात्रात्मक पासाओ में सिमिट कर रह जाती है तो सम्पोषित विकास संभव नहीं हो सकता। शिक्षण के सही स्वरूप की ओर इंगित करते युवाशक्ति व राष्ट्रीय पृष्ठ-भूमि के एक प्रतिनिधिपूर्ण सशक्त हस्ताक्षर स्वामी विवेकानन्द के विचार मूल्य आधारित शिक्षण के विचार नींव के पत्थर माने जा सकते हैं "वह शिक्षा जो जन समुदाय को जीवन समुदाय जीवन संग्राम के उपयुक्त नहीं बनाती, जो उनमें दया का भाव व सिंह का साहस पैदा नहीं करती, जो उनमें चरित्र शिक्षा का विकास नहीं करती क्या हम उसे शिक्षा कह सकते हैं? हमें तो ऐसी शिक्षा चाहिए जिससे चरित्र बने, मानसिक शक्ति बढ़े और बुद्धि का विकास हो जिससे मनुष्य अपने पैरों पर खड़ा हो सके। शिक्षा के मकसद को मुंशीगीरी, वकालत या सरकारी अफसरी के दायरों में नहीं समेटा जा सकता। इससे देश को क्या लाभ होगा, यह कसौटी का आधार है।"

गांधीजी हिन्दस्वाज्य पुस्तक में शिक्षण पर विचार रखते हुए स्पष्टता करते हैं कि मैं किसी भी तौर पर आधुनिक शिक्षा का विरोध नहीं करता। किन्तु भौतिक-विज्ञान में आगे बढ़ा ये जगत मानो बहुत पीछे खिंचा चला जा रहा है। मानवजाति अगर इसी दिशा में अंधी दौड़ लगाती रही तो वह आत्महत्या की ओर ही जाएगी। भौतिक समृद्धि के स्थान पर मानवीय मूल्य आधारित नीतिगत शिक्षा को प्रथमिक स्थान दिया जाना आवश्यक है। उस पर जो इमारत खड़ी होगी, वह टिक सकेगी अन्यथा हमें अपने ही अन्दर से कंगाल होने में कोई कसर नहीं रहेगी। अफसोस! कि हम स्वराज्य की बात भी पराई भाषा में करते हैं। आज की अराजकता बाहर की दैन नहीं अपितु अपनी ही कमजोरियों का नतीजा है।

सच में गांधीजी में समस्या की जड़ तक पहुँचने का हुन्नर था उनके मूल्य आधारित शिक्षण स्वरूप के विचारों से तथ्यात्मक आधार पर पूर्णतया सहमत होते हुए कहा जा सकता है कि हमें किसी भी कार्य की सार्थकता परखने के लिए तत्व और तंत्र का विचार करना होगा। तंत्र अर्थात् कार्यक्रमों का स्वरूप व इसके अमलीकरण का ढाँचा देश काल की परिस्थिति के अनुसार भिन्न हो सकता है किन्तु किसी भी दशा में उसका मकसद, दिशा, जिसे तत्व कहा जाता है, जिसकी शाश्वतता सनातन कही जा सकती है, सदैव ही अपरिवर्तनीय रहनी चाहिए। अर्थात् उसका सरोकार मानवीय-मूल्य आधारित राष्ट्रीय विकास या जन-हित के साथ होना ही चाहिए। इनके साथ समझौता नहीं किया जा सकता। मनुष्य तो खदान से निकले हुए पत्थर के समान है, वह हीरे का रूप धारण नहीं कर सकता जब तक उसे सच्ची बुनियादी शिक्षा रूपी(सैद्धान्तिक व व्यावहारिक सर्वोपयोगी) पारसमणि से उसे तराशा न जाय। समाधानों अपने अन्दर ही खोजना श्रेयस्कर है।

संदर्भ

I. मोहनदास करमचन्द गांधी- ग्राम स्वराज्य

II. मोहनदास करमचन्द गांधी- मेरे सपनों का भारत

III. मोहनदास करमचन्द गांधी- हिन्दस्वराज्य

IV. मोहनदास करमचन्द गांधी- रचनात्मक कार्यक्रम

****

डॉ. लोकेश जैन सह-प्राध्यापक

ग्रामीण प्रबन्ध अध्ययन केन्द्र

गूजरात विद्यापीठ

ग्रामीण परिसर-राँधेजा

गांधीनगर

Copyright © 2012 – 2017 KCG. All Rights Reserved. | Powered By: Knowledge Consortium of Gujarat